जन्म शताब्दी पुस्तकमाला- ३६

धर्म मंच से लोकशिक्षण

(प्रवचन)

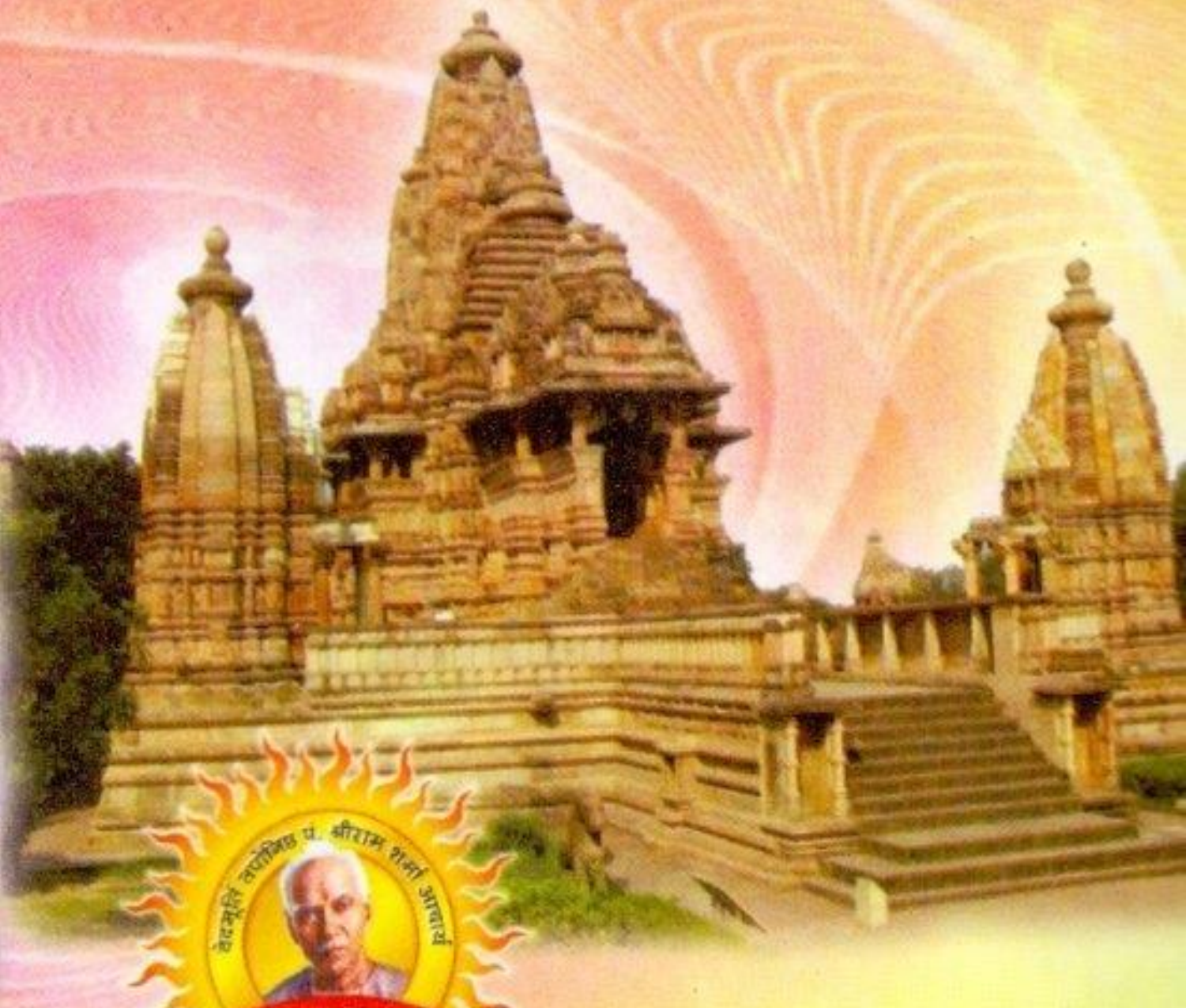

धर्म मंच से लोकशिक्षण

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

देवियो, भाइयो! युग निर्माण योजना धर्म मंच से लोकशिक्षण का उद्देश्य लेकर चली है। मनुष्य के मस्तिष्क को जो बातें प्रभावित करती हैं, उनमें कई चीजें आती हैं। उनमें से सबसे पहला है—धर्म। हमारा देश धर्मप्रधान देश है। हिंदू समाज में जितने भी महापुरुष हुए हैं, वे इसी माध्यम को लेकर चले हैं। हिंदू समाज में से ही क्यों? क्योंकि प्रत्येक महत्त्वपूर्ण कार्य, जो संसार में प्रारंभ किए गए हैं और विश्व का उत्थान करने की योजनाएँ बनाई गई हैं, उनको इसी वर्ग ने और इसी देश ने उठाया और आगे बढ़ाया है, क्योंकि इसके संचालक लोग इसी वर्ग और इसी देश में पैदा हुए थे। इसीलिए हिंदू धर्म को लेकर और भारतीय समाज को लेकर, भारतवर्ष की

परिस्थितियों को लेकर हमारी सारी की सारी योजनाएँ बनाई गई हैं। हमारी शतसूत्री योजना में जहाँ तक धर्म मंच का सवाल है, हिंदू धर्म के उद्देश्य और लक्ष्य रखकर कार्यक्रम बनाए गए थे, लेकिन अब अगले कदम और भी बड़े महत्त्वपूर्ण बनने जा रहे हैं।

मित्रो! हमारे अगले कदम केवल हिंदू धर्म तक सीमित रहने वाले नहीं हैं, बल्कि अन्य सभी धर्मों को साथ लेकर हम चलेंगे। अब तक यही प्रयास किए गए हैं कि अपने धर्म के सभी लोग एकत्रित हो जाएँ। सभी धर्म इकट्ठे होकर अपने धर्म के अंतर्गत ही दीक्षित हो जाएँ। ईसाइयों ने यही प्रयास किए कि दुनिया के लोग ईसाई बन जाएँ, तब कुछ काम बने। मुसलमानों ने जोर-जबरदस्ती से लेकर दूसरे तरीकों से यही प्रयास किए कि सारी दुनिया के लोग मुसलमान बन जाएँ। आर्यसमाजियों ने भी ऐसा ही प्रयत्न किया। दूसरे लोगों ने भी ऐसे ही प्रयत्न किए, लेकिन ये योजना और ये विचारणा एक ख्वाब बन करके रह गई कि

सारी दुनिया के लोग एक मजहब में हो जाएँगे। इसके बाद दुनिया में शांति मिल जाएगी, ऐसा कभी संभव नहीं है।

सभी ओर से एक कदम आगे बढ़ें

संभव सिर्फ यह है कि जो लोग जहाँ हैं, वहीं से आगे कदम बढ़ाएँ और एक लक्ष्य की ओर चलने के लिए तैयार हों। कुंभ का मेला इलाहाबाद में हो, तो यही तरीका अच्छा है कि वाराणसी वाले अपने यहाँ से चलें। दूसरे जिले वाले अपने यहाँ से चलें। इस प्रकार भिन्न-भिन्न जगहों से सब चलें, लेकिन एक जगह पहुँच जाएँ, तो कुंभ के मेले का उद्देश्य जरूर पूरा हो जाएगा, लेकिन अगर यह प्रयास किया गया कि सब लोग एक जगह इकट्ठे हो जाएँ, इसके बाद चलना प्रारंभ करेंगे तो ख्वाब कभी पूरा नहीं हो सकेगा। सारे के सारे धर्म एक स्थान पर केंद्रित हों, एक धर्म में सारी दुनिया दीक्षित हो जाए, ये बहुत लंबी और असंभव योजना है। इसलिए हमें इस असंभव योजना के पीछे न पड़कर

यह प्रयास करना होगा कि सभी धर्म अपना-अपना प्रयास प्रारंभ करें और उनकी दीक्षाएँ, उनके उद्देश्य, उनके लक्ष्य, उनके क्रिया-कलाप वही हों, जो कि हिंदू धर्म को लेकर युग निर्माण योजना ने बनाए हैं। मुसलमानों में, ईसाइयों में भी यही प्रयास करना पड़ेगा, जो हमने हिंदू धर्म में किया है।

मित्रो, जैसे वेदों के उदार और महान दृष्टिकोण को जनता के सामने लाया गया है। अब समय आ गया है कि हमें उसी तरह से कुरान में से भी वही दृष्टिकोण सामने रखने पड़ेंगे, जिसको मुसलमान समाज में उसी तरीके से हृदयंगम किया जाए, जिस तरीके से हिंदू समाज ने युग निर्माण योजना के विचारों को हृदयंगम किया है। ईसाई समाज और दूसरे समाजों के लिए भी यही करना पड़ेगा। अगले दिनों हमारे ये प्रयास होने चाहिए कि न केवल हिंदू धर्म, बल्कि अन्य अन्यान्य धर्मों का अवलंबन करने वाले लोग भी इसी तरीके से कदम बढ़ाएँ। ये धर्म मंच वाली बात हुई।

अब तक हम धर्म मंच तक ही सीमित बने रहे। केवल धर्म की सत्ता ही एकमात्र सत्ता नहीं है, जो कि मनुष्यों के मस्तिष्क को प्रभावित करती है। इसके अलावा भी दूसरी सत्ता और शक्तियाँ हैं, जो कि मनुष्य को उसी तरीके से प्रभावित करती हैं जैसे कि साहित्य। अब हमारे प्रयास और आगे बढ़ने चाहिए।

साहित्य भी एक माध्यम बने

मित्रो, इनमें से साहित्य एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। किसी जमाने में लेखकों का नाम साहित्यकार था और उन्हें कलम का धनी समझा जाता था और कलम के लोग ही दुनिया को पढ़ सकते थे, लेकिन अब विज्ञान ने साहित्यकार की परिभाषा बदल दी है। उसका दायरा बड़ा हो गया है। अब केवल लेखक ही साहित्यकार नहीं हैं, अब प्रकाशक भी साहित्यकार हैं, अब अखबारनवीस भी साहित्यकार हैं, अब पुस्तक विक्रेता भी साहित्यकार हैं। ये सब मिलाकर साहित्यकार बनते हैं। ये साहित्यकार यदि

चाहें तो जनता के विचारों को बदल सकते हैं। हमारे युग निर्माण योजना के भावी कार्यक्रमों में ये बात सम्मिलित की जा रही है कि हम न केवल भारतवर्ष के बल्कि दुनिया भर के साहित्यकारों को झकझोरें, क्योंकि उन्होंने अब तक जो विघातक और मनोवृत्तियों को नीचे गिराने वाला साहित्य लिखा है, उसके स्थान पर अब वे अपने दृष्टिकोण बदल दें और इस तरह के साहित्य का निर्माण करें, जो मनुष्य के मस्तिष्क को उच्चस्तरीय बनाने में सहायता कर सके। साहित्यकारों की ओर अभी तक ध्यान नहीं दिया गया। युग निर्माण योजना के अगले कदम साहित्यकारों तक भी जाएँगे। पुराने साहित्यकार इसमें सहमत न हुए तो हमको नई सृष्टि कर नए साहित्यकारों का, नए लेखकों का सृजन करना पड़ेगा। नए पत्रकारों का सृजन और नया प्रेस स्थापित करना पड़ेगा। नए प्रकाशक और विक्रेताओं का अलग संगठन करना पड़ेगा, क्योंकि साहित्य की उपेक्षा करके हम नए निर्माण की आवश्यकता को पूरा नहीं कर सकते।

चित्रकला से सृजन की ओर

मित्रो, इसके बाद एक और वर्ग है, उसका नाम है चित्रकार। चित्र कितने महत्त्वपूर्ण हैं? गंदे चित्र घरों में टँगे रहते हैं, जो हमको न जाने कैसा बना देते हैं। छोटे-छोटे बच्चों के मनों में इससे अश्लील भावना पैदा होती है। नारी के प्रति एक भाई के तरीके से भाव होने चाहिए, लेकिन गंदी तसवीरों ने न जाने नारी का किस कुतूहल और कौतुक का रूप बना दिया। हमारे विचारों में नारी के प्रति कैसी घृणित और कुत्सित भावना पैदा कर दी। नर और नारी में क्या फरक हो सकता है। बिना मूँछ वाला नर नारी के तरीके से है और नकली मूँछ यदि नारी के लगा दी जाए, तो वह भी तो नर जैसी दिख सकती है। उसको ऐसा घृणित रूप दिया गया, यह हमारी कला का दुरुपयोग है। यह दुरुपयोग बंद किया जाना चाहिए। कलाकार को इस बात से रोका जाना चाहिए कि नारी को वह वासना की मूर्ति, रमणी, कामिनी के रूप में चित्रित न करे, बल्कि उसका वह

स्वरूप प्रस्तुत करे, जिसको हम देवी कहते हैं। उसकी गरिमा को अक्षुण्ण रखें। यह काम चित्रकार का था कि उसे नारी का चित्र बनाना था, तो वह एक बुढ़िया का चित्र बना सकता था। कैसा सौंदर्य उस चित्र में हो सकता था। किसी अस्सी वर्ष की बुढ़िया के चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ी हुई हैं। कला की दृष्टि से ये झुर्रियाँ अपने आप में अत्यधिक सौंदर्य की सूचक हैं। इसी प्रकार से छोटी बच्चियों के, बालिकाओं के सौंदर्य का चित्रण नहीं हो सकता था। एक प्रौढ़ महिला जो अपने कंधे पर बच्चे को लिए हुए खेत पर काम करने जा रही थी, क्या सुंदर नहीं बन सकती थी? रमणी का वह अंग, जिसको कि नहीं देखना चाहिए, उसको दिखाने वाला चित्रकार अगर आज का कलाकार है, तो हम नहीं जानते कि फिर घटिया व्यक्ति किसे कहेंगे?

कलाकार साधक बनें, मार्गदर्शक बनें

यही बात गायकों, वादकों और अभिनय करने वालों के बारे में भी लागू होती है। ये नट और

नर्तक हैं, कलाकार नहीं। नट और नर्तकों को हमारे यहाँ निम्नस्तरीय लोगों में गिना गया है। कलाकार अपने यहाँ एक ब्राह्मण होता था, संत होता था, योगी होता था, साधक होता था। आज कलाकार कहाँ रह गया है? आज तो नर्तक और नट का स्वरूप है, क्योंकि उसने कला को एक वेश्या का रूप दे दिया और उस वेश्या ने मानव समाज को निम्नस्तरीय, अधोगामी बना देने में बहुत योगदान दिया है। कलाकार को अब कहना ही पड़ेगा कि कलाकार का मतलब भी साहित्यकार के तरीके से विस्तृत हो गया है। पहले कलाकार वे कहलाते थे, जो कि हाथ से तसवीरें बनाते थे। अब तसवीर बनाने वाला भी कलाकार है, प्रकाशक और विक्रेता भी कलाकार है। मूर्तिकार भी कलाकार होता है, गायक-वादक भी कलाकार होता है। अभिनय करने वाला, नाटक करने वाला भी कलाकार होता है। अब ये सारे के सारे क्षेत्र मिल करके कला में आते हैं।

समानांतर कलातंत्र खड़ा हो

मित्रो, आगे चलकर कला के भावनात्मक क्षेत्र और मनुष्य की भावना का विकास करने के लिए कला को हमें अपने क्षेत्र में सम्मिलित करना पड़ेगा। जिस तरह से धर्म मंच के माध्यम से हम अब तक के प्रयास करते रहे हैं कि लोगों की भावनाओं में धार्मिकता की वृद्धि की जाए। अब केवल उस तक सीमित रहना काफी नहीं होगा, बल्कि कला को भी हमको अपने हाथ में लेना पड़ेगा। संगीतकारों को कहना पड़ेगा कि उनको अपना तरीका बदल देना चाहिए। फिल्म बनाने वालों को कहना पड़ेगा कि अब उनको भी अपना तरीका बदल लेना चाहिए। अगर वे अपने आप को नहीं बदलते हैं तो हमको उनके मुकाबले के लिए परदे पर नए कलाकार खड़े करने पड़ेंगे। उस मुकाबले में नया स्टेज दूसरा नाट्य मंच खड़ा करना होगा। दूसरे संगीत प्रचलित करने पड़ेंगे। दूसरे संगीत-विद्यालय खड़े करने पड़ेंगे। हमको दूसरे गायन को जन्म देना पड़ेगा। कला के

माध्यम से हम बहुत कुछ कर सकते हैं और हमें करना भी चाहिए। कला का जो मैंने जिक्र किया, साहित्य का मैंने जिक्र किया और धर्म मंच की बात मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ। अब इसके बाद दो और शक्तियाँ रह जाती हैं, जो बड़ी उपयोगी और बड़ी ही महत्त्वपूर्ण हैं।

संपदावान भी चेतें

मित्रो, इनमें से एक विज्ञान आता है और दूसरा धन आता है। धनवानों के पास हमें जाना ही पड़ेगा। धनवानों से हमें यह कहना पड़ेगा कि अब वह जमाना चला गया, जबकि लोग अपार संपदा इकट्ठी कर लेते थे और सम्मान भी प्राप्त कर लेते थे। अब कोई आदमी यदि संपदा इकट्ठी कर लेगा तो उसको उसी तरीके से निकृष्ट व्यक्ति माना जाएगा, जिस तरह से चोर-डाकू और दूसरों को माना जाता है। कोई आदमी ब्लैक तरीके से धन कमा लेता है तो जनता उसको बहुत बुरे-बुरे शब्दों से संबोधित करती है। जो चोर-बाजारी से पैसे इकट्ठे कर लेते

हैं, उसे हर आदमी नफरत की निगाह से देखता है। गवर्नमेंट के दूत जब आते हैं तो उनको बुरे तरीके से निचोड़ते रहते हैं। हर आदमी उन्हें बेईमान मानता है। अगले दिनों वह समय आएगा कि जिसके पास अनावश्यक पैसा जमा होगा, उस आदमी को बेईमान माना जाएगा और यह माना जाएगा कि वह समाज में अनैतिक प्रवृत्तियों का जन्मदाता है, क्योंकि इससे डाह और ईर्ष्या पैदा होती है। अपराध करने की वृत्तियाँ भी उससे पैदा होती हैं।

बेटे, चोर-डाकू अपने आप पैदा नहीं होते हैं। सिर के अंदर जुएँ अपने आप पैदा नहीं होते। जब मैल सिर के अंदर होगा तो जुएँ पैदा होंगे ही। संपत्ति अनावश्यक रूप से जहाँ कहीं भी इकट्ठी होगी, वहाँ उससे डाह और ईर्ष्या करने वाले, डाकू-चोर और आपराधिक प्रवृत्तियाँ पैदा होंगी ही। व्यसन पैदा होंगे ही, संतान को कुमार्गगामी बनने का मौका मिलेगा ही। शराबखोरी बढ़ेगी, व्यभिचार बढ़ेंगे ही। धन जहाँ कहीं भी बढ़ेगा, वहाँ उस देश में यदि

उसका वितरण ठीक न हुआ, कुछ लोग गरीब और कुछ लोग अमीर रहे तो उससे बुराइयाँ ही पैदा होंगी। धन मनुष्य के पास है जरूर, पर वह अमानत के रूप में। हर संपत्तिवान से अगले दिनों हमको यह कहना पड़ेगा कि आप इस पैसे को अपने बेटे-पोतों के लिए जमा मत कीजिए, अपनी विलासिता में खरच न कीजिए। खरच उस सीमा तक कीजिए, जिस तक कि देश का सामान्य नागरिक जीवनयापन करता है।

धन लोकमंगल में लगे

आप धन कमाते हैं मुबारक। कौन मना करता है कि धन नहीं कमाना चाहिए, लेकिन खरच करने पर बंधन है। आप खरच अनावश्यक नहीं कर सकते। आप अपना स्वास्थ्य बढ़ाइए, कोई रोक नहीं, मुबारक हो आपको। आप जितना चाहें स्वास्थ्य को बढ़ाएँ, लेकिन आप स्वास्थ्य को अनैतिक कार्यों में खरच करना चाहें, डकैती डालने में खरच करना चाहें तो समाज आपको रोकेगा। धन आपके पास है

मुबारक, लेकिन आप धन को विलासिता में, वासना में और बेटे-पोतों तक सीमित रखकर दूसरे लोगों को उससे वंचित रखेंगे तो उसके लाभ से तो समाज आपको रोकेगा ही। हमको हर पैसे वाले से कहना पड़ेगा और पैसे वाले को इस बात के लिए मजबूर करना पड़ेगा कि धन को लोकमंगल के लिए खरच किया जाए। लोकमंगल के कितने जरूरी काम आजकल ऐसे ही अधूरे पड़े हुए हैं। वह धन जो कि लोग अपने निजी खरच में खरच कर डालते हैं, उसको बचाया जा सके तो कितने काम हैं जो आगे बढ़ाए जा सकते हैं। शिक्षा की समस्या के लिए पैसे की जरूरत है। लोगों के स्वास्थ्य-संवर्द्धन के लिए भी पैसे की जरूरत है? हाँ, बहुत पैसे की जरूरत है। खासतौर से मनुष्यों के विचारों को ढालने और बदलने का काम हँसी-खेल नहीं है।

मित्रो! लोहे को ढालने के लिए कच्चे लोहे को गरम करना, पिघलाना, ढालना और बनाना अपने आप में बड़ा भारी काम है। इसके लिए बड़ी भट्ठियाँ

खड़ी करनी पड़ती हैं और उसको ढालने-गलाने के लिए बहुत टैक्नीशियन इकट्ठे करने पड़ते हैं। ठीक उसी प्रकार मनुष्यों के कच्चे, पिछड़े और उलझे हुए दिमागों को सुलझे हुए दिमाग के रूप में ढालने के लिए हमको अनेक प्रचारतंत्र ऐसे खड़े करने पड़ेंगे, जिससे कि लोगों के विचारों में परिष्कार किया जा सके। यह काम पैसे का है और पैसे वालों को आगे बढ़ना ही चाहिए। फिल्म उद्योग, जो कि जनता को प्रभावित करने का सबसे बड़ा माध्यम है, वह उस जनता को गिराने में सबसे बुरी तरह से लगा हुआ है। अखबार पढ़ने वालों की संख्या और साहित्य पढ़ने वालों की संख्या दोनों को मिलाकर भी फिल्म देखने वालों की संख्या कहीं ज्यादा है। हमारा काम है, पैसे वालों का काम है कि फिल्म का ऐसा ऊँचा स्तर बनाकर सामने लाएँ कि लोगों के विचारों को ढालने और बदलने में मदद करें। कला का दुरुपयोग नहीं किया जा सकता। उसका सदुपयोग लोगों को उच्चस्तरीय ढाँचे में ढालने में होना ही चाहिए।

विचार-परिवर्तन में लगेगी पूँजी अगले दिनों

मित्रो, धनवान क्या केवल बीड़ी बनाने के उद्योग में ही अपना पैसा खरच करते रहेंगे? क्या चाय बागानों में ही लोगों की पूँजी लगती रहेगी? क्या वनस्पति तेल बनाने में ही लोगों की पूँजी लगी रहेगी? क्या चमड़े का व्यवसाय करने में ही लोगों की पूँजी लगी रहेगी? क्या पूँजी को ऐसे काम करने के लिए मौका-अवसर नहीं है, जिससे कि लोगों के भावों को परिष्कृत किया जाए? क्या पूँजी सस्ता साहित्य प्रकाशित करने में नहीं लगाई जा सकती। ईसाइयों की बाइबिल जिस तरह से सस्ते में छपती है, क्या हम नैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विचारों को असंख्य भाषाओं में छापने के लिए पूँजी का प्रयोग नहीं कर सकते? क्या अच्छे चित्रों का प्रकाशन करने के लिए पूँजी की जरूरत नहीं है? पूँजी का आह्वान है। हम पूँजी का आह्वान करेंगे और कहेंगे कि जिन लोगों के पास पूँजी है, उन लोगों को पूँजी इस काम में खरच करनी चाहिए।

अगर ये लोग इसके लिए तैयार नहीं होते हैं तो हमको पूँजी नए ढंग से इकट्ठी करने की बात सोचनी पड़ेगी। हर आदमी के पास बचत का पैसा जहाँ कहीं भी हो, उनसे यह कहना पड़ेगा कि बचत की जरूरत नहीं है, आप ऐसे काम में पैसा लगा दीजिए, यह भी एक तरह का बैंक है। हम भी ऐसा काम खड़ा करना चाहते हैं। आपके पास अनावश्यक खेत हैं तो उसको बेच दीजिए। जेवर हैं तो उसको बेच दीजिए। दूसरी फालतू चीजें हैं, तो उसको बेच दीजिए। गरीब लोगों के यहाँ भी कुछ थोड़ी-बहुत बचत का सामान घर में फालतू हो तो उसे बेच देना चाहिए और उस पूँजी को थोड़ी-थोड़ी इकट्ठी करके हमको ऐसी लिमिटेड कंपनी या दूसरी सहकारी समिति के रूप में पूँजी एकत्रित करनी चाहिए। उससे उन अभावों की पूर्ति करनी चाहिए, जिनकी ओर अभी मैंने आपको संकेत किया।

मित्रो! हमको, युग निर्माण योजना को नई पूँजी की जरूरत है। अगर यह संपन्न लोगों से नहीं

आती है तो गरीबों से भी आ सकती है; एक-एक मुट्ठी अनाज इकट्ठा करके। पचास करोड़ गरीब लोग हैं, अगर एक-एक रुपया इकट्ठा करें तो हम पचास करोड़ रुपया इकट्ठा कर सकते हैं। उस पचास करोड़ रुपए से हम वह काम कर सकते हैं, जो साहित्य निर्माण से लेकर फिल्म निर्माण तक का है। विचार आंदोलन से लेकर नए अखबार शुरू करने का है, इससे एक वर्ष के अंदर देश का कायाकल्प किया जा सकता है। पूँजी अगर पूँजीपतियों से नहीं आती है, तो हमको उसका कोई इंतजार नहीं है। हम जनता के पास जाएँगे, दरवाजा खटखटाएँगे और कहेंगे कि पूँजी की हमको जरूरत है और पूँजी को लिमिटेड कंपनी या सहकारी समिति के रूप में संग्रहीत होना ही चाहिए।

धर्म के नियंत्रण में राजसत्ता

मित्रो, अभी मैं युग निर्माण योजना के भावी कार्यक्रमों के बारे में कह रहा था। मैं यह निवेदन कर रहा था कि अगले दिनों हमें राष्ट्रसत्ता पर हावी होना

पड़ेगा। राष्ट्रसत्ता के बारे में मैंने कभी यह नहीं कहा कि धर्म का राजनीति से कोई संबंध नहीं है। दूसरे ढोंगी लोग हैं जो यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई संबंध नहीं है। मैंने हमेशा से यही कहा है कि धर्म के नियंत्रण के भीतर राजनीति को रहना ही चाहिए और रहना ही होगा। प्राचीनकाल में गुरु वसिष्ठ रघुवंश के ऊपर नियंत्रण रखते थे। चाणक्य का नियंत्रण चंद्रगुप्त के वंश तक रहा। धर्म की सत्ता पहले ब्राह्मण के हाथ में रहती थी और साथ ही राजसत्ता भी धर्म के नियंत्रण में रहती थी। धर्म के नियंत्रण में राजसत्ता को रहना ही चाहिए। जिनके हाथ में हुकूमत है उनको नीति और सदाचार का पालन करना ही चाहिए। सदाचारी के हाथ में अगर हुकूमत हो और वे चाहें तो एक कदम में न जाने क्या से क्या कर सकते हैं!

मित्रो, जिन चीजों की मैं अभी शिकायत कर रहा था कि हमारे देश में दूध की नदियाँ बहती थीं, पर अब दूध का अभाव है। राजनीति चाहे, सत्ता

चाहे तो पशुओं का कटना बंद कर सकती है, जिससे दूध और दही की नदियाँ फिर से बह सकती हैं। जिसकी अभी मैं शिकायत कर रहा था कि हमारे देश में फिल्म के नाम पर और कला के नाम पर अनाचार फैल रहा है। सरकार चाहे तो इनका राष्ट्रीयकरण कर सकती है और एक दिन में इनका सफाया हो सकता है। हमारे यहाँ अनाज का जितना खरचा है, ठीक उतना ही खरचा नशाबाजी का है। अगर सरकार चाहे तो एक दिन में नशेबाजी समाप्त कर सकती है। सरकार को बदलना चाहिए और उसे बदलना ही होगा।

युग निर्माण योजना के अगले कदम

साथियो, मैं इन बातों में यकीन नहीं करता, जिनको घिराव कहते हैं या दूसरे तरीके कहते हैं या सरकार से दूसरे झगड़े मोल लेना कहते हैं। मैं तो वोटर के पास जाना चाहता हूँ। युग निर्माण योजना को वोटर के पास जाना चाहिए, क्योंकि प्रजातंत्र की सारी शक्ति तो वोटरों के पास है। वोटरों को समझाना

पड़ेगा कि उनको अपना प्रतिनिधि किन्हें चुनना चाहिए? उनको वोट किन सिद्धांतों के लिए देना चाहिए? जात-बिरादरी के नाम पर नहीं, मेल-मुलाकात के नाम पर नहीं, किसी के नाम पर भी नहीं, पैसे के नाम पर नहीं, सूरत के नाम पर नहीं। देश, धर्म, संस्कृति और समाज के उत्थान के नाम पर वोट देने के लिए उनको आगे आना पड़ेगा। इसके लिए हमको जनता का द्वार खटखटाना पड़ेगा। हम जनता का द्वार खटखटाएँगे। युग निर्माण योजना इसके लिए अपने कदम आगे बढ़ाएगी। उसका कार्यक्षेत्र अगले दिनों साहित्य भी होगा। उसका कार्यक्षेत्र अगले दिनों कला भी होगा। उसका कार्यक्षेत्र अगले दिनों अर्थव्यवस्था भी होगा। उसका कार्यक्षेत्र अगले दिनों राजनीति भी होगा।

मित्रो, इस तरह से ये युग निर्माण योजना का स्वरूप, जो कि पहले किसी समय में परिस्थितियों के अनुरूप धर्म से प्रारंभ हुआ था, अब इसका क्षेत्र बढ़ता ही चला जाएगा। अभी तक बढ़ते-बढ़ते हम

इस स्थिति में आ गए हैं कि कल नहीं तो परसों अपने लक्ष्य तक पहुँच ही जाएँगे, जब मनुष्य में देवत्व का उदय किया जा सकेगा और पृथ्वी पर स्वर्ग का अवतरण किया जा सकेगा। समग्र शांति और प्रगति इसी तरीके से आएगी। समस्याओं का हल इसी तरीके से होगा। यही युग निर्माण योजना का लक्ष्य है। जिसके लिए हम प्रयत्नशील हैं और आप सबको उन प्रयत्नों में सहयोगी होना ही चाहिए।

धर्मतंत्र को प्रखर-पवित्र बनाने की आवश्यकता

यदि दृष्टिकोण परिष्कृत न हो सका, भावनाएँ उदात्त न हो सकीं, आत्मीयता की परिधि विस्तृत न हुई तो मनुष्य पशु-प्रवृत्तियों में ही जकड़ा रहेगा। संपन्नता, कुशलता और समर्थता कितनी ही बढ़ी-चढ़ी क्यों न हो! उपलब्ध साधनों का दुरुपयोग ही होता रहेगा। दुरुपयोग करने में हर साधन का अपने और दूसरों के लिए कष्टकारक प्रतिफल ही उत्पन्न

होता है। भ्रष्ट चिंतन और भ्रष्ट आचरण के रहते कुबेर के समान संपन्नता और गणेश के समान बुद्धिमत्ता भी मात्र विपत्तियों का ही उत्पादन करती रहेगी। सज्जनता के रहते स्वल्प साधनों में भी सुखपूर्वक रहा और शांतिपूर्वक रहने दिया जा सकता है। पारस्परिक सद्भाव से उत्पन्न सहयोग, सम्मान और स्नेह की सम्मिलित प्रतिक्रिया इतनी सुखद होती है कि उसे स्वर्ग के समतुल्य कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है। मनुष्य शरीर नहीं आत्मा है। शरीर को सुविधा प्रदान करने वाले साधन जितने आवश्यक हैं, उससे भी अधिक उपयोगी वे आधार हैं जो आत्मा की उत्कृष्टता का रसास्वादन कराते हैं। इन्हें प्राप्त न कर सकने पर भौतिक दृष्टि से इंद्र जितना समृद्ध मनुष्य भी आंतरिक दृष्टि से निरीह, दयनीय, अपंग, पीड़ित स्थिति में पड़ा कराहता रहता है। विद्या की, ब्रह्म विद्या की, आंतरिक उत्कृष्टता की आवश्यकता इतनी अधिक है कि उसे अन्न, जल और वायु की तरह ही आत्मा की अनिवार्य

आवश्यकता कहा जा सकता है। इसके अभाव में ही अगणित समस्याएँ उपजती हैं, गुत्थियाँ उलझती हैं और व्यक्ति तथा समाज में अगणित प्रकार के शोक-संताप, कष्ट-क्लेश सहन करने पड़ते हैं। व्यक्ति को सुसंस्कृत, संतुष्ट एवं समाज को समृद्ध रहना हो तो आत्मपरिष्कार की उस प्रशिक्षण व्यवस्था को जुटाया जाना चाहिए जिसे विद्या कहते हैं और अध्यात्म तथा धर्म जिसके उपकरण हैं।

मनुष्य की अंत:स्थिति को उत्कृष्टतायुक्त बनाने की व्यवस्था सदा धर्म मंच से ही चलती रही है, क्योंकि वह एक आधार अंत:करण के मर्मस्थल को स्पर्श करता है। जानकारियाँ तो मस्तिष्क को ही विकसित कर पाती हैं। आस्था, निष्ठा एवं श्रद्धा का क्षेत्र गहरा है। उस तक धर्म की ही पहुँच है। बुद्धि से नहीं उसे भावना से छुआ जाता है। उसके लिए आवश्यक अनुदान विश्वचेतना से, परमात्मसत्ता से ही उपलब्ध होते हैं। इसलिए उसे पाने के लिए उपासना-साधना जैसे माध्यम अपनाने पड़ते हैं। इस

आवश्यकता की पूर्ति किए बिना व्यक्ति तथा समाज को प्रस्तुत दुर्गति से उबारा न जा सकेगा। अगणित समस्याओं और विभीषिकाओं का समाधान तत्त्व-दृष्टि प्राप्त किए बिना और किसी प्रकार संभव न हो सकेगा। युग निर्माण योजना द्वारा 'धर्म मंच से लोक शिक्षण' की प्रक्रिया इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए की जा रही है। इसे लोक-कल्याण का सर्वोपरि माध्यम माना जाता रहा है। आज की स्थिति में तो उसे जीवन-मरण की समस्या सुलझाने जितना महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

हम राजनीति की चकाचौंध को देखते हैं और उसी के आधार पर समस्याओं को हल करने की बात सोचते हैं। धर्मतंत्र की शक्ति और संभावना से हम एक प्रकार से अपरिचित जैसे हो चले हैं। बेशक राजनीति की सामर्थ्य उसकी तुलना में नगण्य ही ठहरती है। शासन-संचालन में लगभग लाखों कर्मचारी संलग्न हैं, जबकि धर्म को आजीविका बनाकर गुजारा करने वालों की संख्या कहीं उसके

दूने से भी अधिक है। जितना टैक्स सरकार वसूल करती है, उससे लगभग दूना धन धर्म कार्यों में खरच होता है। तीर्थयात्रा, पर्व-त्योहार, कुंभ जैसे धार्मिक मेले, यज्ञ-सम्मेलन, कथा-वार्ता, मंदिर, मठ, साधुओं की जमातें, धर्मानुष्ठानों के अवसरों पर किए जाने वाले दान, पूजा, उपकरण, धर्मग्रंथ, प्रतिमाएँ आदि सब मिलाकर जनता प्रचुर मात्रा में खुशी-खुशी धन खरच करती है। जप, आवाहन, संयम आदि के लिए लोग कष्ट भी सहते हैं। धर्म-प्रयोजनों के लिए मंदिर आदि की इतनी अधिक इमारतें बनी हुई हैं, जो सरकारी इमारतों से किसी प्रकार कम नहीं। धर्म प्रयोजनों में जनता की श्रद्धा भी कम नहीं। समय आने पर वह उसके लिए बहुत कुछ त्याग करने को भी तैयार हो जाती है।

सच तो यह है कि हमने स्वाधीनता संग्राम भी धर्म के नाम पर लड़ा है। महात्मा गांधी के नाम के साथ महात्मा शब्द न होता तो संभवत: उन्हें इतना जन सहयोग न मिल सका होता।

रामराज्य की स्थापना की उनकी घोषणा के आधार पर भारत की जनता मर-मिटने को तैयार हुई थी। सन् १८५७ का स्वतंत्रता संग्राम चरबीयुक्त कारतूस मुँह में लगाने में धर्मभ्रष्टता अनुभव करने वाले सैनिकों द्वारा ही भड़का था। क्रांतिकारियों ने गीता की पुस्तकें छाती से बाँधकर फाँसी के तख्ते पर चढ़ते हुए जनता की श्रद्धा अर्जित की थी।

बेशक, आज धर्मतंत्र बुरी दशा में विकृत बना लुंज-पुंज पड़ा है और अपनी उपयोगिता खो बैठा है। फिर भी यह संभावना पूरी तरह विद्यमान है कि यदि उसे सुव्यवस्थित बनाया जा सके और प्रबुद्ध व्यक्तियों द्वारा नवनिर्माण के प्रयोजनों में प्रयुक्त किया जा सके, तो इसका परिणाम आशाजनक सफलता ही होगा। इतिहास बताता है कि धर्मतंत्र सृष्टि के आदि से अब तक कितना शक्तिशाली रहा है! उसने सदा से राजतंत्र पर नियंत्रण करने की अपनी वरिष्ठता कायम रखी है। समय बताएगा उसी के द्वारा मानव जाति की आत्यंतिक समस्याओं का समाधान होगा।

राजनीति को कितनी ही प्रमुखता क्यों न मिली हो, धर्मतंत्र को उसकी महत्ता के अनुरूप प्रतिष्ठा मिलने ही वाली है। कारण स्पष्ट है। मानव जाति की भौतिक आवश्यकताएँ और समस्याएँ स्वल्प हैं। उन्हें बुद्धिमान मानव प्राणी आसानी से हल कर सकता है। जिस विभीषिका ने अगणित गुत्थियाँ उलझा रखी हैं, वह भावनात्मक विकृति ही है। मनुष्य का आंतरिक स्तर गिर जाने से उसने पशु एवं पिशाच वृत्ति अपना रखी है। इसी से पग-पग पर कलह और क्लेश के आडंबर खड़े दिखाई पड़ते हैं। यदि भावनात्मक उत्कृष्टता संसार में बढ़ जाए, तो आज हर मनुष्य देवताओं जैसा महान दिखाई दे और सर्वत्र स्वर्गीय सुख-शांति का वातावरण दृष्टिगोचर होने लगे। समस्त रोगों का निदान एक ही है। समस्त समस्याओं का हल यह एक ही है।

हमें जड़ तक पहुँचना होगा और उसी को सींचना होगा। रोग के अनुरूप चिकित्सा खोजनी होगी। जहाँ छेद है, वहाँ बंद करना होगा। अन्यथा

सुख-शांति के व प्रगति एवं समृद्धि के स्वप्न कभी भी साकार न हो सकेंगे। बालू के महल रोज बनते-बिगड़ते रहेंगे, मगर उनसे प्रयोजन कुछ भी सिद्ध न होगा। भारत के पुनरुत्थान में निश्चित रूप से धर्म को ही महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करनी पड़ेगी, क्योंकि जनसाधारण की प्रसुप्त आंतरिक सत्प्रवृत्तियों को इसी आधार पर जगाया जा सकना संभव होगा। जितनी जल्दी इस तथ्य को हम हृदयंगम कर लें उतना ही उत्तम है।

राष्ट्र के अतीत गौरव के अनुरूप हमें पुनः अपने उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करना ही होगा। प्रबुद्ध आत्माओं के सामने यह चुनौती प्रस्तुत हुई है कि वे अपनी तुच्छ तृष्णाओं तक सीमाबद्ध संकीर्ण जीवन बिता देने की अपेक्षा किसी तरह संतोष से गुजारा चलाते हुए अपनी बढ़ती शक्तियों का उपयोग युग की विषम समस्याओं को सुलझाने के लिए करने को तत्पर हों। चारों ओर आग लगी हो और उसे बुझाने की अपेक्षा अपनी चैन की वंशी बजाने

में जो संलग्न हों; ऐसे प्रतिभावान की-सामर्थ्यवान की विकृत गतिविधियों पर विश्वमानव की घृणा ही बरसेगी। भावी पीढ़ियाँ उसे फटकारेंगी। कर्त्तव्य से विमुख रहने के कारण अंतरात्मा उसे कोसती ही रहेगी।

हम सौभाग्य या दुर्भाग्य से अग्निपरीक्षा के युग में पैदा हुए हैं। इसलिए सामान्य काल की अपेक्षा हमारे सामने उत्तरदायित्व भी अत्यधिक हैं। अतएव उपेक्षा करने का दंड भी अधिक है। संकटकाल के कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व, प्रतिबंध एवं दंड विधान भी विशेष होते हैं। आज वैसी ही स्थिति है। मानव जाति अपनी दुर्बुद्धि से ऐसे दलदल में फँस गई है, जिसमें से बाहर निकलना उसके लिए कठिन हो रहा है। मर्मांतक पीड़ा से उसे करुण-क्रंदन करना पड़ रहा है। परिस्थितियाँ उन सभी समर्थ व्यक्तियों को पुकारती हैं कि इस विश्वसंकट की घड़ी में उन्हें कुछ साहस और त्याग का परिचय देना ही चाहिए। पतन को उत्थान में बदलने के लिए उन्हें कुछ करना

ही चाहिए। हम चाहें तो थोड़ा-थोड़ा सहयोग देकर देश, धर्म, समाज एवं संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं और नया संसार, सुंदर संसार, उत्कृष्ट संसार बनाने के लिए एक चतुर शिल्पी की तरह अपनी सहृदयता-कलाकारिता का परिचय दे सकते हैं।

॥ ॐ शांतिः ॥ ❐

सद्वाक्य

* नवनिर्माण का अर्थ है—मानव जीवन के उद्देश्य, आदर्श एवं स्तर में उत्कृष्टताकर समावेश।

* अपने कर्त्तव्य का निष्ठापूर्वक पालन करने से बड़ा कोई धर्म नहीं है।

* शालीनता बिना मोल मिलती है, पर उससे सब कुछ खरीदा जा सकता है।

* अपना मूल्य समझो और विश्वास करो कि तुम संसार के सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो।

* उत्कृष्ट जीवन का स्वरूप है—दूसरों के प्रति नम्र और अपने प्रति कठोर होना।

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)